आपके धर्मविज्ञान का निर्माण

अध्याय 1

धर्मविज्ञान क्या है?

Manuscript

thirdmill
Biblical Education. For the World. For Free.

© थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़ 2021के द्वारा

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस प्रकाशन के किसी भी भाग को प्रकाशक, थर्ड मिलेनियम मिनिस्ट्रीज़, इनकोरपोरेशन, 316, लाइव ओक्स बुलेवार्ड, कैसलबरी, फ्लोरिडा 32707 की लिखित अनुमति के बिना समीक्षा, टिप्पणी, या अध्ययन के उद्देश्यों के लिए संक्षिप्त उद्धरणों के अतिरिक्त किसी भी रूप में या किसी भी तरह के लाभ के लिए पुनः प्रकशित नहीं किया जा सकता।

पवित्रशास्त्र के सभी उद्धरण बाइबल सोसाइटी ऑफ़ इंडिया की हिन्दी की पवित्र बाइबल से लिए गए हैं। सर्वाधिकार © The Bible Society of India

थर्ड मिलेनियम के विषय में

1997 में स्थापित, थर्ड मिलेनियम एक लाभनिरपेक्ष सुसमाचारिक मसीही सेवकाई है जो पूरे संसार के लिए मुफ्त में बाइबल आधारित शिक्षा प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध है।

संसार के लिए मुफ़्त में बाइबल आधारित शिक्षा।

हमारा लक्ष्य संसार भर के हज़ारों पासवानों और मसीही अगुवों को मुफ़्त में मसीही शिक्षा प्रदान करना है जिन्हें सेवकाई के लिए पर्याप्त प्रशिक्षण प्राप्त नहीं हुआ है। हम इस लक्ष्य को अंग्रेजी, अरबी, मनडारिन, रूसी, और स्पैनिश भाषाओं में अद्वितीय मल्टीमीडिया सेमिनारी पाठ्यक्रम की रचना करने और उन्हें विश्व भर में वितरित करने के द्वारा पूरा कर रहे हैं। हमारे पाठयक्रम का अनुवाद सहभागी सेवकाइयों के द्वारा दर्जन भर से अधिक अन्य भाषाओं में भी किया जा रहा है। पाठ्यक्रम में ग्राफिक वीडियोस, लिखित निर्देश, और इंटरनेट संसाधन पाए जाते हैं। इसकी रचना ऐसे की गई है कि इसका प्रयोग ऑनलाइन और सामुदायिक अध्ययन दोनों संदर्भों में स्कूलों, समूहों, और व्यक्तिगत रूपों में किया जा सकता है।

वर्षों के प्रयासों से हमने अच्छी विषय-वस्तु और गुणवत्ता से परिपूर्ण पुरस्कार-प्राप्त मल्टीमीडिया अध्ययनों की रचना करने की बहुत ही किफ़ायती विधि को विकसित किया है। हमारे लेखक और संपादक धर्मवैज्ञानिक रूप से प्रशिक्षित शिक्षक हैं, हमारे अनुवादक धर्मवैज्ञानिक रूप से दक्ष हैं और लक्ष्य-भाषाओं के मातृभाषी हैं, और हमारे अध्यायों में संसार भर के सैकड़ों सम्मानित सेमिनारी प्रोफ़ेसरों और पासवानों के गहन विचार शामिल हैं। इसके अतिरिक्त हमारे ग्राफिक डिजाइनर, चित्रकार, और प्रोडयूसर्स अत्याधुनिक उपकरणों और तकनीकों का प्रयोग करने के द्वारा उत्पादन के उच्चतम स्तरों का पालन करते हैं।

अपने वितरण के लक्ष्यों को पूरा करने के लिए थर्ड मिलेनियम ने कलीसियाओं, सेमिनारियों, बाइबल स्कूलों, मिशनरियों, मसीही प्रसारकों, सेटलाइट टेलीविजन प्रदाताओं, और अन्य संगठनों के साथ रणनीतिक सहभागिताएँ स्थापित की हैं। इन संबंधों के फलस्वरूप स्थानीय अगुवों, पासवानों, और सेमिनारी विद्यार्थियों तक अनेक विडियो अध्ययनों को पहुँचाया जा चुका है। हमारी वेबसाइट्स भी वितरण के माध्यम के रूप में कार्य करती हैं और हमारे अध्यायों के लिए अतिरिक्त सामग्रियों को भी प्रदान करती हैं, जिसमें ऐसे निर्देश भी शामिल हैं कि अपने शिक्षण समुदाय को कैसे आरंभ किया जाए।

थर्ड मिलेनियम a 501(c)(3) कारपोरेशन के रूप में IRS के द्वारा मान्यता प्राप्त है। हम आर्थिक रूप से कलीसियाओं, संस्थानों, व्यापारों और लोगों के उदार, टैक्स-डीडक्टीबल योगदानों पर आधारित हैं। हमारी सेवकाई के बारे में अधिक जानकारी के लिए, और यह जानने के लिए कि आप किस प्रकार इसमें सहभागी हो सकते हैं, कृपया हमारी वैबसाइट http://thirdmill.org को देखें।

विषय-वस्तु

परिचय.......... 1
परिभाषायें.......... 1
विशेष परिभाषाएँ.......... 2
थौमस ऐक्वीनास.......... 2
चार्ल्स हौज.......... 3
विलियम ऐम्स.......... 4
जान फ्रेम.......... 4
प्रवृतियाँ.......... 4
शैक्षिक दिशा निर्धारण.......... 5
जीवन दिशा निर्धारण.......... 5
मूल्यांकन.......... 6
शैक्षिक दिशा निर्धारण.......... 6
जीवन दिशा निर्धारण.......... 7
उद्देश्य.......... 9
प्राथमिक उद्देश्य.......... 9
उचित सोच (रूढ़िवादी सोच).......... 9
उचित व्यवहार.......... 11
उचित भावनाएँ.......... 12
आपसी निर्भरता.......... 13
उचित सोच.......... 13
उचित व्यवहार.......... 14
उचित भावनाएँ.......... 15
प्राथमिकताएँ.......... 15
विषय.......... 17
कई विकल्प.......... 17
चुनाव.......... 18
उपसंहार.......... 19

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

आपके धर्मविज्ञान का निर्माण

अध्याय एक

धर्मविज्ञान क्या है?

परिचय

मैं ऐसा मानता हूँ कि कई बार दिमाग में कोई विशिष्ट दिशा या योजना के बगैर ही पैदल यात्रा करना अच्छा होता है। कहीं जाने के उद्देश्य से अलग भ्रमण करने में मज़ा आ सकता है, लेकिन जब आपके पास कोई विशिष्ट उद्देश्य हो, जब किसी निश्चित समय पर आपको किसी विशेष स्थान पर होना है, तो सामान्यतः यह अच्छा है कि आपके पास निम्न वस्तुएँ हों- एक मानचित्र, एक योजना, और एक मार्ग जिस पर आपको चलना है।

पाठों की इस श्रृंखला का नाम है "अपने ईश्वरीय-ज्ञान को बनाना।" जब हम अपने ईश्वरीय-ज्ञान को बना रहे हैं तो विश्वासयोग्य निष्कर्षों पर पहुँचना इतना महत्वपूर्ण है कि उस उद्देश्य तक पहुँचने के लिये हमारे पास एक योजना का होना अति आवश्यक है। इसलिये, इन पाठों की श्रृंखला में, एक विश्वासयोग्य मसीही ईश्वरीय-ज्ञान को बनाने के लिये हम कुछ आधारभूत और ज़रूरी दिशाओं का, जिन पर हमें चलना है, जाँच-पड़ताल करेंगे।

पहले पाठ का नाम "ईश्वरीय-ज्ञान क्या है?" रखा गया है, और इस प्रश्न के प्रति हमारा उत्तर, ईश्वरीय-ज्ञान को पढ़ने की हमारी उस योजना की ओर इशारा करेगी, जिसने भूतकाल में कलीसिया को लाभ पहुँचाया है और जिसको हमें आज मानना चाहिये। इस योजना की छान-बीन करने के लिये, हमारा पाठ तीन भाग में विभाजित हो जायेगा: पहले भाग में, हम ईश्वरीय-ज्ञान की परिभाषा को देखेंगे; दूसरे में, हम ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों की छान-बीन करेंगे; और तीसरे में, हम ईश्वरीय-ज्ञान के विषयों को थोड़ा बहुत देखेंगे। जब हम "ईश्वरीय-ज्ञान" शब्द को इस्तेमाल करते हैं तो इससे हमारा क्या मतलब है?; आयें हम इस बात को परिभाषित करने के द्वारा शुरूआत करें।

जब हम इस विषय की ओर देखते हैं, हम तीन बातों को पाते हैं: पहला यह कि, हम कुछ विशिष्ट परिभाषाओं को देखेंगे जो कि चार मसीही धर्म-विज्ञानियों ने दी हैं; दूसरा, हम इन परिभाषाओं के कुछ झुकावों (रुझानों) या दृष्टिकोणों की व्याख्या करेंगे; और तीसरा, हम इन झुकावों का मूल्यांकन करेंगे। आयें पहले धर्म-विज्ञानियों द्वारा ईश्वरीय-ज्ञान को परिभाषित करने की कुछ विधियों की ओर रुख करें।

परिभाषायें

रोमियों पहले अध्याय के अनुसार, एक बहुत ही महत्वपूर्ण पहलू है जिसमें सभी मनुष्य अपने पूरे जीवन भर ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित करते हैं। यहाँ तक कि अविश्वासी भी सर्वव्यापी प्रकाशन का सामना करते हैं, जो उन्हें, कई बार चाहे अनजाने में ही सही, परमेश्वर पर और उसके न्याय-संगत माँगों पर किसी न किसी तरीके से ध्यान करने के लिये बाध्य करते हैं। और विश्वासी चाहें वे किसी भी व्यवसाय में क्यों न हों, परमेश्वर के बारे में मनन करने में अपना ज़्यादा समय व्यतीत करते हैं। फिर भी, अब जबकि हम पढ़ाई शुरू कर रहे हैं, हम ईश्वरीय-ज्ञान के ऊपर ज़्यादा औपचारिक कार्य के रूप में ध्यान केंद्रित करना चाहते हैं, वह कार्य जो उन लोगों द्वारा किया जाता है जो पढ़ाई के किसी विशेष पाठ्यक्रम में गहन और ज्ञान वर्धक प्रयास करते हैं।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

विशेष परिभाषाएँ

मसीहों और गैर मसीहों ने ईश्वरीय-ज्ञान के औपचारिक पाठ्यक्रम को अनगिनत रीतियों में परिभाषित किया है। लेकिन जब हम ईश्वरीय-ज्ञान की औपचारिक पढ़ाई पर अपना वार्तालाप शुरू कर रहे हैं, तो हम अपना ध्यान-केंद्र चार बहुत ही सम्मानित, मसीही धर्म-विज्ञानियों तक ही सीमित रखेंगे, जिन्होंने हमें लाभकारी दिशा निर्देशन दिये हैं। आयें उन परिभाषाओं पर ध्यान करें जो कि हम थौमस ऐक्वीनास, चार्ल्स हौज, विलियम ऐम्स और आज के समय के जान फ्रेम के लेखनों में पाई जाती है।

थौमस ऐक्वीनास

पहले, थौमस ऐक्वीनास, एक जाने-माने रोमन केथोलिक धर्म-विज्ञानी, जो कि ईश्वरीय-ज्ञान की बहुत ही पारम्परिक परिभाषा को प्रस्तुत करते हैं। उनका दृष्टिकोण, उनसे पहले हुए धर्म-विज्ञानियों की सोच पर ही आगे बढ़ा, और आज भी कलीसिया के कई हिस्सों में उनका प्रभाव जारी है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "सुम्मा थियोलौजिका" के 1 पुस्तक, 1 अध्याय के, 7 भाग में, थौमस ऐक्वीनास, ईश्वरीय-ज्ञान को एक "पवित्र सिद्धांत", कहते हैं और उसको इस प्रकार परिभाषित करते हैं:

> एक एकीकृत विज्ञान जिसमें परमेश्वर के सभी पहलुओं को पढ़ा जाता है या तो इसलिये क्योंकि वे स्वयं परमेश्वर हैं या क्योंकि वे परमेश्वर की ओर इशारा करते हैं।

ईश्वरीय-ज्ञान के छात्र के लिये यह परिभाषा काफ़ी संतोषजनक है और हम में से कई लोगों के लिये यह बहुत अर्थपूर्ण भी है। इसमें दो महत्वपूर्ण पहलू हैं जो हमारा विशेष ध्यान माँगती हैं।

पहला, ऐक्वीनास ईश्वरीय-ज्ञान को एक "विज्ञान" के रूप में परिभाषित करता है। लेकिन "विज्ञान" से उनका अर्थ उसकी आधुनिक शब्दावली के अनुसार नहीं है, लेकिन बुद्धि और विद्या की खोज के बड़े अर्थ से है। इस अर्थ में, ईश्वरीय-ज्ञान एक शैक्षिक कार्य है, न कि एक विशेष उद्देश्य। थौमस ऐक्वीनास की परिभाषा दिखाती है कि जिस प्रकार कुछ लोग प्राणी विज्ञान, मनो-विज्ञान, कानून या इतिहास की पढ़ाई करते हैं, उसी प्रकार कुछ लोग ईश्वरीय-ज्ञान को एक शैक्षिक पाठचक्रम के रूप में उसकी पढ़ाई करते हैं। ईश्वरीय-ज्ञान का यह अर्थ उन बातों और कार्यों से मुख्यतः पूरा किया जाता है जो कि सामान्यतः किसी शैक्षिक पढ़ाई से संबंधित होती हैं।

इस दृष्टिकोण में, धर्म-विज्ञानी का कार्य ईश्वरीय-ज्ञान के सिद्धांतों या विचारों को मुख्यतः सोचना, पढ़ना या लिखना होता है। फिर भी, निःसंदेह, ऐक्वीनास यह विश्वास नहीं करते थे कि ईश्वरीय-ज्ञान महज एक शैक्षिक कार्य बन कर रह जाये; लेकिन वे विश्वास करते थे कि ईश्वरीय-ज्ञान का मसीही जीवन के हर एक पहलू पर प्रभाव होना चाहिये। लेकिन फिर भी, उसका विचार, ईश्वरीय-ज्ञान को मुख्यतः एक बौद्धिक कार्य के रूप में सोचने की ओर जाता दिखता (प्रवृत) है।

हम जब ऐक्वीनास की ईश्वरीय-ज्ञान की परिभाषा की ओर दृष्टि करते हैं, हम दूसरे महत्वपूर्ण पहलू को देखते हैं। ऐक्वीनास के लिये ईश्वरीय-ज्ञान के कम से कम दो स्तर हैं। एक ओर धर्म-विज्ञानी लोग "स्वयं परमेश्वर" की बातों को बताते हैं। जिस प्रकार से हम परमेश्वर के गुणों पर विचारों को बनाते हैं: उसका सर्वज्ञान, उसका सर्व-व्यापी गुण, उसकी पवित्रता। इन विषयों को हम "वास्तविक ईश्वरीय-ज्ञान" पढ़ाई कहते हैं। कहने का अर्थ यह है कि जो हम पढ़ते हैं, परमेश्वर स्वयं उसका विषय-वस्तु है।

दूसरी ओर, ऐक्वीनास जब इस शब्द का इस्तेमाल करते हैं, तो ईश्वरीय-ज्ञान किसी भी अन्य विषय की पढ़ाई है, जो कि परमेश्वर से या परमेश्वर की ओर इशारा करती है। इन विषयों पर परमेश्वर का कोई विशेष हवाला दिये बगैर विचार-विमर्श किया जा सकता है, लेकिन इन बातों को परमेश्वर से संबंधित बना कर धर्म-विज्ञानी अपनी कौशल कला को दिखाते हैं। जैसे कि अंत-समय का ज्ञान, ईश्वरीय-ज्ञान में

महत्वपूर्ण विषय हैं। पाप, उद्धार का सिद्धांत और यहाँ तक कि मसीह की प्रभु भोज में उपस्थिति जैसे विषय ईश्वरीय-ज्ञान के शीर्षक के नीचे पाये जाते हैं, चाहे भले ही वे वास्तविक ईश्वरीय-ज्ञान के विषय नहीं हैं।

ऐक्वीनास द्वारा इस आधारभूत दिशा-निर्देशन की स्थापना के साथ ही, प्रोटेस्टेंट धर्म-विज्ञानी चार्ल्स हौज से कुछ ऐसा ही सुनना अच्छा होगा।

चार्ल्स हौज

चाहे प्रोटेस्टेंट सुधारवाद ने मसीह के शरीर के लिये बहुत बदलाव किये, फिर भी इसने ईश्वरीय-ज्ञान की मूलभूत परिभाषा में बहुत ज़्यादा बदलाव नहीं किया। प्रिंसटन के चार्ल्स हौज, जो सन् 1797 से 1879 तक जीवित रहे, ईश्वरीय-ज्ञान की परिभाषा को अपनी पुस्तक सिस्टमैटिक थियोलौजी के पहले अध्याय में इस प्रकार देते हैं। ईश्वरीय-ज्ञान "ईश्वरीय प्रकाशन के तथ्यों का विज्ञान है, उस हद तक, जहाँ कि ये तथ्य परमेश्वर के स्वभाव से और उसके साथ हमारे संबंधों से सरोकार रखते हैं।"

आइये ईश्वरीय-ज्ञान की इस परिभाषा के कई पहलुओं को खोजें। पहला, हौज की परिभाषा बहुत कुछ ऐक्वीनास की परिभाषा जैसी ही है, लेकिन हमें ध्यान देना चाहिये कि वह स्पष्टता के साथ प्रकाशन का उल्लेख करता है। ईश्वरीय-ज्ञान "ईश्वरीय प्रकाशन के तथ्यों" से संबंधित है। निःसंदेह, ऐक्वीनास ने भी परमेश्वर के प्रकाशन पर निर्भरता को खोजा, लेकिन हौज की परिभाषा विशेष प्रोटेस्टेंट चिंता को प्रगट करती है, जिसका नाम है, परमेश्वर के प्रकाशन की महत्त्वता, विशेष रूप से बाइबल जो कि ईश्वरीय-ज्ञान का प्रमुख स्रोत व संसाधन है।

दूसरी बात, यह भी ध्यान देना ज़रूरी है, कि ऐक्वीनास की तरह ही, हौज भी ईश्वरीय-ज्ञान को एक "विज्ञान" बताता है-उसने ईश्वरीय-ज्ञान को मुख्यतः एक शैक्षिक पाठ्यक्रम के रूप में देखा। वास्तव में, हौज ने अपने ज़माने की प्राकृतिक या भौतिक विज्ञान के तरीकों का वास्तविक प्रयोग एक नमूने के तौर पर किया, ताकि धर्म-विज्ञानी लोग उसे अपना सकें। अपने सिस्टमैटिक थियोलौजी के शुरुआती पन्नों में वे जिस प्रकार इसको कहते हैं, उसको सुनें:

> जिस प्रकार प्रकृति, रसायन शास्त्र या यांत्रिकी शास्त्र की प्रणाली है उसी प्रकार से बाइबल ईश्वरीय-ज्ञान की प्रणाली से ज़्यादा और कुछ नहीं है। प्रकृति में हम उन तथ्यों को पाते हैं जो कि एक रसायन शास्त्री या यांत्रिकी के दार्शनिक को परखने होते हैं...उन नियमों की पुष्टि करने के लिये जिनसे वे निर्धारित किये जाते हैं। इसी प्रकार से बाइबल में सत्य पाये जाते हैं जिन्हें धर्म-विज्ञानी को उनके आपसी संबंधों में जमा करना, पुष्टि करना, व्यवस्थित करना, और दिखाना होता है।

हौज के लिये, एक धर्म-विज्ञानी का कार्य है कि बाइबल को आँकड़ों के रूप में इस्तेमाल करे, शोध करे, परखे और आँकड़ों को व्यवस्थित उसी तरह से करे जिस प्रकार 19 वीं सदी का वैज्ञानिक दूसरे शैक्षिक क्षेत्रों में करता है। फिर वह यह भी विश्वास करते हैं कि धर्म-विज्ञानी के निष्कर्षों को मसीही जीवन में लागू होना चाहिये, लेकिन ऐक्वीनास की ही तरह, हौज भी व्यवहारिकता को सेवकों और पादरियों के ज़िम्मे सौंपना चाहते हैं, इस प्रकार शिक्षकों और उनके छात्रों के पास ही औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान का असली कार्य छोड़ दिया जाता है।

तीसरे स्तर पर, हम देखते हैं कि हौज यह भी दावा करते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान में दो प्रमुख विषय होते थे। जब हम ईश्वरीय-ज्ञान को सोचते हैं, हम मुख्यतः "परमेश्वर के स्वभाव" और "उसके साथ हमारे संबंधों" पर विचार करते हैं। ईश्वरीय-ज्ञान में यह विभाजन ऐक्वीनास की परिभाषा के समान है, जो "वास्तविक ईश्वरीय-ज्ञान" और "सामान्य ईश्वरीय-ज्ञान" में अंतर करती है।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

ऐक्वीनास और हौज की ईश्वरीय-ज्ञान की परिभाषा को देखने के बाद, तीसरी परिभाषा को देखना उपयोगी होगा। विलियम ऐम्स, एक प्रभावशाली प्यूरिटन थे, जो सन् 1576 से सन् 1633 तक जीवित रहे, उन्होंने ईश्वरीय-ज्ञान के बारे में थोड़ा भिन्न तरीके से बोला है।

विलियम ऐम्स

अपनी पुस्तक, मैरो औफ़ थियोलौजी के शुरुआती भाग में, ऐम्स कहते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान की अंतर-आत्मा है "परमेश्वर को समर्पित जीवन जीने की शिक्षा या सिद्धांत।"

ईश्वरीय-ज्ञान पर ऐम्स का दृष्टिकोण हमारे द्वारा पहले देखी गई दो परिभाषाओं से भिन्न है। पहला तो यह, कि उनकी परिभाषा "विज्ञान" शब्द का प्रयोग नहीं करती। ऐम्स ज़रूर यह कहते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान "सिद्धांत या शिक्षा है", जिसका अर्थ है कि ईश्वरीय-ज्ञान विचारों और शिक्षाओं की बौद्धिक खोज है। लेकिन वह ऐक्वीनास एवं हौज की भाषा में प्रस्तावित ईश्वरीय-ज्ञान और दूसरे शैक्षिक पाठ्यक्रमों के बीच नज़दीकी सहयोग को नकारते हैं।

दूसरा, जबकि ऐम्स इस बात की पुष्टि करते हैं कि, ईश्वरीय-ज्ञान सिद्धांतों की शिक्षा है, ध्यान दें कि वे इस शिक्षा के विषय के रूप में किस बात का उल्लेख करते हैं: "परमेश्वर को समर्पित जीवन जीना।" ऐक्वीनास, और कुछ हद तक हौज भी, ईश्वरीय-ज्ञान पर आँकड़ों और विचारों के संग्रह के रूप में देखते हैं, लेकिन ऐम्स ज़ोर देते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान में परमेश्वर को समर्पित जीवन और परमेश्वर के लिये, किसी व्यक्ति को कैसा जीवन जीना है, शामिल है। ईश्वरीय-ज्ञान को मुख्यतः बौद्धिक तथ्यों पर आधारित खोज तक ही सीमित करने की बजाय, ऐम्स उसे विश्वासी के जीवन के और बड़े क्षेत्र में अनुभवात्मक (जिसे प्यूरिटन लोग "प्रायोगिकता" कहते थे) दिशा निर्धारण की नज़र से देखते हैं। उनके लिये, ईश्वरीय-ज्ञान, ईश्वरीय-ज्ञान की मज्जा, को कार्यान्वित इस प्रकार करते हैं जब इसे मसीही जीवन के और बड़े दृष्टिकोण से देखते हैं।

हाल के समय के धर्म-विज्ञानी जान फ्रेम का दृष्टिकोण ऐम्स के दृष्टिकोण के साथ ठीक बैठता है।

जान फ्रेम

अपनी पुस्तक द डाक्ट्रिन औफ द नौलेज औफ गौड के तीसरे अध्याय में, फ्रेम ईश्वरीय-ज्ञान को इस प्रकार परिभाषित करते हैं, मनुष्यों द्वारा परमेश्वर के वचन को जीवन के सभी क्षेत्रों पर लागू करना।

फ्रेम दोनों ऐक्वीनास एवं हौज से कुछ बातों में सहमत हैं, क्योंकि वे दूसरी जगहों पर "लागू करने" को "शिक्षा" या "सिद्धांत" के रूप में परिभाषित करते हैं। इसके बावजूद, जैसा कि वे दूसरी जगहों में कहते हैं, फ्रेम के लिये, शिक्षा "लोगों की ज़रूरतों को पूरा करने के लिये" पवित्र शास्त्र को प्रयोग में लाने का कार्य है। ईश्वरीय-ज्ञान, पारम्परिक शैक्षिक विषयों के समूह की सोच मात्र नहीं है। इसके विपरीत ईश्वरीय-ज्ञान एक व्यवहारिकता है; यह पवित्र शास्त्र की शिक्षाओं को जीवन के बड़े क्षेत्र में लागू करने जैसा है।

अब जबकि हमने ईश्वरीय-ज्ञान की चार विभिन्न परिभाषाओं को देख लिया है, उनके द्वारा प्रतिनिधित्व परिदृश्यों या प्रवृतियों (झुकाव) की तुलना करना हमारे लिये उपयोगी होगा।

प्रवृतियाँ

ये चार परिभाषाएँ दो कीमती परिदृश्यों को प्रगट करते हैं जिन्हें धर्म-विज्ञानियों ने अपनी पढ़ाई का विषय बनाया है। हम पहले परिदृश्य को शैक्षिक दिशा निर्धारण और दूसरे को जीवन दिशा निर्धारण कह सकते हैं।

शैक्षिक दिशा निर्धारण

एक तरफ़, ऐक्वीनास और हौज, ईश्वरीय-ज्ञान में शैक्षिक दिशा निर्धारण का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनका दृष्टिकोण उस ढाँचे को दिखाता है जिसके अनुसार अधिकांश मसीही धर्म-विज्ञानियों ने ईश्वरीय-ज्ञान को परिभाषित किया है। साधारण शब्दावली में, वे "ईश्वरीय-ज्ञान" की परिभाषा को उसके मूल शब्द की उत्पत्ति, या "ईश्वरीय-ज्ञान" शब्द के भाषाई पृष्टभूमि के अनुसार बताते हैं। ईश्वर का अर्थ है "परमेश्वर," और यह ईश्वरीय-ज्ञान शब्द का आधा हिस्सा है। और इस संदर्भ में ज्ञान का अर्थ है किसी वस्तु का "विज्ञान, या सिद्धांत या पढ़ाई" और यह "ईश्वरीय-ज्ञान" शब्द का दूसरा हिस्सा बनाती है। तो मूल शब्द की उत्पत्ति के अनुसार "ईश्वरीय-ज्ञान" शब्द का अर्थ हुआ "परमेश्वर की पढ़ाई या उसका सिद्धांत।"

अब, शायद ही कोई ऐसा सच्चा, सुसमाचार को मानने वाला धर्म-विज्ञानी होगा जो यह कहेगा कि परमेश्वर के बारे में पढ़ना ही अपने आप में सब कुछ है। ज़्यादातर विश्वासी समझते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान को उनके जीवन में किसी न किसी रूप में लागू होना चाहिये। लेकिन औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान के लिये व्यवहारिकता इतनी ज़रूरी नहीं मानी जाती, लेकिन एक दूसरे स्तर के रूप में, जिसे कभी-कभी व्यवहारिक ईश्वरीय-ज्ञान कहा जाता है, यानी कुछ ऐसी बात, जिसमें हम परोक्ष कार्य के रूप से हिस्सा तब लेते हैं, जब हमने औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान में बौद्धिक, शैक्षिक विषयों को विकसित कर लिया होता है।

परिणामस्वरूप, अकसर औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान इस प्रकार कार्यान्वित होता है जिसमें सामान्य जीवन जीने के विषय में बहुत थोड़ा ध्यान दिया जाता है। यह एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें कुछ ही शैक्षिक रूप में प्रतिभाशाली लोगों ने अपने आप को कुछ हद तक ही सार्थक रूप में शामिल किया है। ईश्वरीय-ज्ञान में एक तरह की बौद्धिक विशेषज्ञ स्वभाव का विकास हो रहा है। दूसरी ओर की परिभाषाओं में हमने देखा है कि ऐम्स और फ्रेम एक महत्वपूर्ण अल्पसंख्यक दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते है, जीवन के प्रति ईश्वरीय-ज्ञान का दिशा निर्धारण।

जीवन दिशा निर्धारण

ऐसे कुछ धर्म-विज्ञानी हर समय रहे हैं जिन्होंने ईश्वरीय-ज्ञान को, विश्वासी जीवन जीने के बड़े क्षेत्र से अच्छी तरह से बंधा पाया है, लेकिन भूतकाल में बहुत ही थोड़े धर्म-विज्ञानियों ने इस विचार को माना था। हाल के वर्षों में, और अधिक धर्म-विज्ञानियों ने ईश्वरीय-ज्ञान के इस विचार को त्यागना शुरू कर दिया है कि ईश्वरीय-ज्ञान का सिर्फ़ बौद्धिक मामलों से ही संबंध होना चाहिये। उन्होंने औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान को न सिर्फ़ मसीही जीवन के बौद्धिक या शैक्षिक आधार के रूप में देखा है, बल्कि एक कठिन प्रशिक्षण के रूप में जो कि वास्तविकता और मूलभूत तौर से मसीह के लिये जीवन जीने से संबंध रखती है।

कई कारण हैं कि क्यों इस अल्पसंख्यक दृष्टिकोण ने हाल के दशकों में ज़्यादा

समर्थक पाने का आनंद उठाया है। इनमें से कुछ कारण ईश्वरीय-ज्ञान से आते हैं और कुछ पवित्र शास्त्र में से भी। लेकिन हमें सावधान रहना है क्योंकि बहुत कुछ इस बढ़ती सर्वसम्मति में पाश्चात्य संस्कृति के झुकाव से निकलता है जिसने विशेषज्ञों को, उनकी कुशलता से परे, उनके निष्पक्ष होने की योग्यता पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया है। इन दिनों में हमें निरंतर बुद्धि जीवियों के मानव होने के बारे में याद दिलाया जाता है और कि कैसे उनका जीवन, उनके शैक्षिक लक्ष्य को प्रभावित करता है।

उदाहरण के लिये, वैज्ञानिक एवं चिकित्स्य व्यवसायी, जो कि कभी बिल्कुल निष्पक्ष समझे जाते थे, आज साधारण लोगों के समान देखे जाते हैं। हम निरंतर उन रीतियों के अनुसार उनके विचारों पर प्रश्न उठाते हैं जो कि कुछ दशकों पहले सोच से बाहर की बात थी। और ठीक इसी तरह से कलीसिया भी अब स्पष्टता से पहचानने लगी है कि कोई कितना भी बुद्धिमान धर्म-विज्ञानी क्यों न हो, वे आखिर में सिर्फ़ मानव ही तो हैं। वे तथ्यों के निष्पक्ष गवाह होने का चाहे कितना भी दावा क्यों न कर लें, उनके विचार उनके जीवन के अनुभवों से गहन रूप से प्रभावित रहते हैं। परिणाम स्वरूप, ईश्वरीय-ज्ञान के प्रति सिर्फ़

शैक्षिक रवैये की कीमत आज कम आँकी जाती है, और व्यवहारिकता की आवश्यकता पहले से ज़्यादा स्पष्ट दिखाई देती है।

शैक्षिक और जीवन निर्धारित ईश्वरीय-ज्ञान की रूपरेखा को दिमाग में रखते हुए, हम पीछे हटेंगे और कुछ प्राथमिक बातों का मूल्यांकन करेंगे।

मूल्यांकन

यह पूछना उपयोगी होता है कि हर एक प्रवृति (झुकाव) में क्या फ़ायदे और क्या हानि पाये जाते हैं। औपचारिक गंभीर ईश्वरीय-ज्ञान में शैक्षिक और जीवन दिशा निर्धारण के क्या सकारात्मक और क्या नकारात्मक बातें हैं?

शैक्षिक दिशा निर्धारण

पहले स्थान में, शैक्षिक दिशा की सबसे बड़ी ताकत यह है कि वह उस वरदान का लाभ उठाती है, जो मानवता के लिये परमेश्वर के अनुग्रहकारी वरदानों में से एक है: हमारी बुद्धि (समझ) की योग्यता। परमेश्वर ने मनुष्यों को बौद्धिक योग्यताएँ दी हैं, और वह अपेक्षा करता है कि धर्म-विज्ञानी लोग इन योग्यताओं का प्रयोग सत्य की खोज में लगायें।

पवित्र शास्त्र में हर जगह, बुद्धिमान मनुष्यों की, उनके बौद्धिक कौशल के लिये, जैसे वे उसका इस्तेमाल परमेश्वर के भय में करते हैं, सराहना की गई है। सत्य के स्वभाव पर सावधानी से मनन करने और उन बुद्धि-संगत जानकारियों से विश्वास के सिद्धांतों की रचना करना ही बुद्धिमान होने के मायने का सही हिस्सा है। सुलैमान बुद्धिमान था क्योंकि उसने विभिन्न विषयों में अपने मनन करने की योग्यता को कार्यान्वित किया।

1 राजा 4 अध्याय उसके 29 और 31 पद में सुलैमान के बारे में विवरण को सुनें।

> परमेश्वर ने सुलैमान को बुद्धि दी, और उसकी समझ बहुत ही बढ़ाई, और उसके हृदय में समुद्र तट की बालू के किनकों के तुल्य अनगिनत गुण दिए।... वह तो और सब मनुष्यों से .... भी अधिक बुद्धिमान था: और उसकी कीर्त्ति चारों ओर की सब जातियों में फैल गई। (1राजा 4:29-31)

इस मायने में, बाइबल का बुद्धि का साहित्य हमें एकदम स्पष्ट उत्साहित करता है कि हम अपने सोचने की योग्यताओं को बढ़ायें और उनका इस्तेमाल करें।

वास्तव में, प्रेरित पतरस, पौलुस की बड़ाई करते हुए कहते हैं कि उसका ईश्वरीय-ज्ञान बौद्धिक रूप से जटिल है। जैसा कि वह 2 पतरस 3 अध्याय, 15 और 16 पद में कहते हैं:

> ... जैसा हमारे प्रिय भाई पौलुस ने भी उस ज्ञान के अनुसार जो उसे मिला, तुम्हें लिखा है।... जिनमें कुछ बातें ऐसी हैं जिनका समझना कठिन है, ...। (2पतरस 3:15-16)

पारम्परिक ईश्वरीय-ज्ञान का बौद्धिक या शैक्षिक ज़ोर बाइबल की अच्छे ईश्वरीय-ज्ञान की सोच का विरोध नहीं करती। इसके विपरीत, परिश्रम के साथ मनन, पारम्परिक ईश्वरीय-ज्ञान की एक बड़ी ताकत है।

फिर भी, हमें बराबर से ज़ोर देना चाहिये कि ईश्वरीय-ज्ञान के शैक्षिक ध्यान-केंद्रण में एक खतरा छिपा हुआ है। दुर्भाग्य से, अकसर ऐसा देखा गया है कि पारम्परिक ईश्वरीय-ज्ञान का रुझान कल्पनाओं या शैक्षिक बातों की ओर ज़्यादा होता है जिसके परिणाम स्वरूप धर्म-विज्ञानी के जीवन को पुस्तकालय से

बाहर बहुत थोड़ा ध्यान मिल पाता है। विचारों की सच्ची रचनाओं तक पहुँचना ही अपने आप में एक लक्ष्य बन जाता है, जिसके फल स्वरूप, लोगों के लिये यह आम धारणा बन जाती है कि वे अच्छे धर्म-विज्ञानी सिर्फ़ इसलिये हैं क्योंकि वे ईश्वरीय-ज्ञान के विषयों के बारे में ज़्यादा जानते हैं। लेकिन कई बार हमें यह मानना पड़ेगा कि "अच्छे धर्म-विज्ञानी", "अच्छे लोग" नहीं होते।

दुःख की बात है, कि यह विवरण बहुत सारे कहने के "अच्छे धर्म-विज्ञानियों" पर लागू होती है। वे बड़ी कुशलता से परमेश्वर और मसीही जीवन के बारे में तथ्यों को जमा एवं उनको व्यवस्थित कर सकते हैं, लेकिन वे मसीही विश्वास की ज्योति में जीवन जीने के ऊपर, उसी तरह से ध्यान देने में असफल रहते हैं।

हम कैसे इस निष्कर्ष तक पहुँचते हैं, जहाँ हम यह विश्वास करते हैं कि कोई व्यक्ति अच्छा धर्म-विज्ञानी हो सकता है, लेकिन एक अच्छा व्यक्ति नहीं? यह तब होता है, जब हम ईश्वरीय-ज्ञान की इस परिभाषा के अंतर्गत ही सोचते हैं कि उसमें सिर्फ़ शैक्षिक कार्य ही शामिल है, जब हम यह सोचते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित करने का अर्थ है अच्छी तरह से पढ़ना, अच्छा लिखना, और सच्चे विचारों को पढ़ाना।

दुर्भाग्य से, आज ज़्यादातर औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान की शिक्षा प्रणाली में यही रुझान उनके आधार से जुड़ा है। यह तथ्य कि ईश्वरीय-ज्ञान के गुरुकुल (सैमनरी) केवल पढ़ाई के कमरे के अनुभव तक ही सुसमाचार के सेवकों को तैयार करने पर निर्भर रहते हैं, इस बात को प्रगट करता है कि हम अभी भी यह विश्वास करते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित, हम वास्तविक जीवन में ईश्वरीय-ज्ञान को जीवन जीने से हटा कर, कर सकते हैं। औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान के प्रति पारम्परिक सोच में यही सबसे बड़ा खतरा है।

हमें यह भी ध्यान देना चाहिये कि जीवन दिशा निर्धारण के साथ भी लाभ और हानियाँ हैं। हमें कैसे इस बढ़ती आम धारणा को परखना चाहिये, कि पढ़ाई से बाहर जीवन के साथ, ईश्वरीय-ज्ञान को, सीधे तौर पर जुड़ा होना चाहिये?

जीवन दिशा निर्धारण

पहले स्थान में, ईश्वरीय-ज्ञान के इस ढाँचे की सबसे बड़ी ताकत यह है कि यह हमें कुछ बाइबल के महत्वपूर्ण सिद्धांतों को मानने के लिये उत्साहित करती है। हम सब याकूब 1 अध्याय 22 पद के जैसे अनुच्छेदों को जानते हैं। वहाँ पर याकूब लिखता है:

> परन्तु वचन पर चलनेवाले बनो, और केवल सुननेवाले ही नहीं जो अपने आप को धोखा देते हैं। (याकूब1:22)

बहुत सारे धर्म-विज्ञानियों का बौद्धिक पाखंड, पवित्र शास्त्र के इन वचनों के द्वारा बिल्कुल व्यर्थ ठहराया जाता है। अच्छा ईश्वरीय-ज्ञान न सिर्फ़ ठीक शिक्षा बल्कि ठीक जीवन जीने की ओर ले चलता है।

क्या पौलुस का अर्थ यही नहीं है जब वह कुरिन्थियों की कलीसिया को 1 कुरिन्थियों 8 अध्याय 1 पद में बोल रहा है:

> ज्ञान घमण्ड उत्पन्न करता है, परन्तु प्रेम से उन्नति होती है। (1कुरि.8:1)

और फिर से 1 कुरिन्थियों 13 अध्याय 2 पद में:

> और यदि मैं ...,सब भेदों और सब प्रकार के ज्ञान को समझूँ, ..., परन्तु प्रेम न रखूँ, तो मैं कुछ भी नहीं। (1कुरि.13:2)

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

हम वास्तव में बाइबल के मानकों को पूरा नहीं कर रहे हैं यदि हम सिर्फ़ किसी वस्तुपरक, विचारों के रूप में, ईश्वरीय-ज्ञान के बारे में सीखने पर ध्यान केंद्रित कर रहे हैं। इसके विपरीत, वह ईश्वरीय-ज्ञान ही जो पवित्र शास्त्र के सिद्धांतों का समर्थन करता है, ऐसा ईश्वरीय-ज्ञान होगा जो कि उन बातों को सजीव करता है जिन पर हम विश्वास करते हैं।

फिर भी, इसके साथ ही, ईश्वरीय-ज्ञान का जीवन दिशा निर्धारण भी गंभीर खतरे को दिखाता हैं; यह बौद्धिकतावाद के खिलाफ़ होने के गंभीर खतरे में जा सकता है। क्योंकि आजकल बहुत से सुसमाचार पर विश्वासी लोग ईश्वरीय-ज्ञान के बौद्धिक रूप पर पूर्ण रूप से अविश्वास करते हैं, वे ईश्वरीय-ज्ञान के सिद्धांतों की सावधानी पूर्वक पढ़ाई के खिलाफ़ हो गये हैं। वास्तव में, वे पारम्परिक, शैक्षिक-रुझान, वाले औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान को मसीही जीवन के लिये हानिकारक मानते हैं।

हम सभी ने ईमानदार लोगों को इस प्रकार बातें करते सुना है, "मैं नहीं सोचता हमें सिद्धांतों पर वार्तालाप करनी चाहिये; यह हमारे दिमाग को मसीह से दूर ले जायेगा।" या शायद आपने किसी को यह कहते सुना होगा, "कलीसिया का अगुवा बनने के लिये तुम्हें ईश्वरीय-ज्ञान को पढ़ने की ज़रूरत नहीं है। आपको बस पवित्र आत्मा की अगुवाई चाहिये।" और जैसा कि मैंने हाल ही में सुना, "बौद्धिक मसीहत मरी हुई मसीहत है।" इन ठीक समझ रखने वाले विश्वासियों में पारम्परिक शैक्षिक रुझान वाले ईश्वरीय-ज्ञान के प्रति नफरत है। वे विश्वास के बौद्धिक-विरोधी रुझान के चलते इसका तिरस्कार करते हैं। अपने जीवन को, इस सावधानी-पूर्वक और यहाँ तक कि कठिन मेहनत से सोची गई ईश्वरीय-ज्ञान पर बनाने की बजाय, ऐसे विश्वासी लोग अपने आत्मिक सहज-ज्ञान के ऊपर बिना उसका मूल्यांकन कर, भरोसा करते हैं। वे महज किसी ताकतवर या करिश्माई अगुवे के पीछे चल रहे होते हैं। या वे पारम्परिक शैक्षिक ईश्वरीय-ज्ञान को किसी अलौकिक आत्मिक अनुभव के लिये बदल देते हैं। चाहे कोई भी कारण हो, हम सभी को कलीसिया में बौद्धिकतावाद-विरोधी भावना के गंभीर ख़तरों का सामना करना चाहिये क्योंकि यह निःसंदेह मसीही विश्वास की गलत शिक्षाओं और ग़लतफ़हमियों की ओर ले जायेंगे, जिनके फलस्वरूप बहुत से विश्वासियों के जीवनों में भयानक परिणाम होंगे।

पौलुस इस खतरे को भांप जाता है जब वह तीमुथियुस को 2 तीमुथियुस 2 अध्याय 15 पद में चेतावनी देता है:

> अपने आप को परमेश्वर का ग्रहणयोग्य और ऐसा काम करनेवाला ठहराने का प्रयत्न कर, जो लज्जित होने न पाए, और जो सत्य के वचन को ठीक रीति से काम में लाता हो। **(2तीमु 2:15)**

हम में से हर एक को सावधान रहना चाहिये कि हम किस प्रकार से ईश्वरीय-ज्ञान को परिभाषित कर रहे हैं। हम में कुछ स्वाभाविक रूप से शैक्षिक-रुझान वाले दृष्टिकोण की ओर, जीवन के दूसरे पहलुओं को नज़र अंदाज़ करके, प्रवृत (झुक) हो जाते हैं। हम में से बाकी बचे हुए जीवन निर्धारण की ओर, बौद्धिक बातों को नज़र अंदाज़ करके, प्रवृत (झुक) हो जाते हैं। इन चरम पंथों से बचने के लिये, हमें इस बात को मानना चाहिये कि दोनों विचारों में खतरे और अच्छी बातें भी हैं। समझदारी का रास्ता यह होगा कि दोनों दृष्टिकोणों को एक ही समय में अपनाया जाये। हमें ईश्वरीय-ज्ञान की आवश्यकता शिक्षा और जीवन, दोनों के लिये है।

धर्म-विज्ञानियों द्वारा ईश्वरीय-ज्ञान को परिभाषित करने के कुछ तरीकों की छान-बीन करने के बाद, हम दूसरे विषय की छान-बीन करने के लिये तैयार हैं: ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्य। वे उद्देश्य क्या होने चाहिये जो कि उस समय सामने आते हैं जब हम ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित करते हैं? ये उद्देश्य आपस में एक दूसरे के साथ किस प्रकार जुड़े हैं?

उद्देश्य

इन प्रश्नों का उत्तर देने के लिये हम तीन बातों की ओर देखेंगे: पहला, हम ईश्वरीय-ज्ञान के तीन प्राथमिक उद्देश्यों की पहचान करेंगे; दूसरा, हम इन तीन उद्देश्यों के पारस्परिक निर्भरता की छान-बीन करेंगे; और तीसरा, इन तीनों उद्देश्यों को जो प्राथमिकता दी जानी चाहिये उसकी छान-बीन करेंगे। आयें हम ईश्वरीय-ज्ञान के इन उद्देश्यों की व्याख्या दे कर शुरूआत करें।

प्राथमिक उद्देश्य

ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों का विवरण करने के इतने सारे तरीके हैं कि उन सभी की सूची बनाना नामुमकिन है। सबसे साधारण शब्दों में, हम ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित उन्हीं कारणों से करते हैं, जिन कारणों से एक मसीही होने के नाते हम दूसरे सब कार्य करते हैं। वेस्टमिन्सटर संक्षिप्त धर्म-प्रश्नोत्तरी की शब्दावली में, पहला प्रश्न, ईश्वरीय-ज्ञान, उन तरीकों में से एक है जिसमें हम, "परमेश्वर की महिमा करते और सदा के लिये उसका आनंद उठाते हैं।" फिर भी इससे भी ज़्यादा संक्षिप्त होने की संभावना है। धर्म-विज्ञानियों के पास विशेष तरीके होने चाहिये जिन से वे इस प्रयास में परमेश्वर की महिमा और परमेश्वर का आनंद उठाने की कोशिश करते हों।

बहुत मायनों में, ईश्वरीय-ज्ञान की परिभाषाओं में विभिन्नताएँ, जिसकी हम पहले ही छान-बीन कर चुके हैं, हमें ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों की पहचान करने में, शुरूआत करने का स्थान प्रदान करती हैं। एक तरफ़ , औपचारिक ईश्वरीय-ज्ञान को मुख्यतः एक विज्ञान के रूप में, ज्ञान के शैक्षिक क्षेत्र के रूप में परिभाषित करने के द्वारा यह दिखाता है, कि, एक उद्देश्य है, बौद्धिक या संकल्पनात्मक, जिसका अर्थ है, सिद्धांतों को पढ़ना या उनका विकास बुद्धि की बातों को ध्यान में रख कर करना; और दूसरी तरफ़ , ईश्वरीय-ज्ञान को जीवन दिशा निर्धारण के रूप में परिभाषित करना यह दिखाता है कि हमारा उद्देश्य ऐसी शिक्षाओं या सिद्धांतों को विकसित करना है, जो कि मसीह में हमारे संपूर्ण जीवन के हर एक पहलू पर ध्यान केंद्रित करते हों।

हम ईश्वरीय-ज्ञान के तीन प्राथमिक उद्देश्यों के बारे में बोल कर ईश्वरीय-ज्ञान पर इन दो दिशा निर्धारणों को और विकसित करेंगे। हम उचित सोच, उचित व्यवहार और उचित भावनाओं के विषय में बातें करेंगे। पहले हम उचित सोच के उद्देश्य को देखेंगे।

उचित सोच (रूढ़िवादी सोच)

पहले स्थान में, सैद्धांतिक रूढ़िवादिता किसी भी ज़िम्मेदार मसीही ईश्वरीय-ज्ञान का प्रमुख उद्देश्य होता है। रूढ़िवाद शब्द का प्रयोग विभिन्न कलीसियाओं द्वारा भिन्न-भिन्न तरीकों से होता है, लेकिन यहाँ पर हम इस शब्द का इस्तेमाल सिर्फ़ इस अर्थ के लिये करेंगे, "सही या सीधी सोच।" उचित सोच का उद्देश्य है कि सही या सच्चे सिद्धांतों तक पहुँचना। इसके कोई मायने नहीं कि हमारी कलीसिया या कलीसियाई वर्ग कौन सा है, जब हम ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित करते हैं, तो जो हम विश्वास करते हैं, उसकी सत्यता पर किसी न किसी हद तक रुचि भी रखते हैं। हम परमेश्वर के बारे में, संसार के और अपने बारे में, सही बातों पर ही विश्वास करना चाहते हैं। ईश्वरीय-ज्ञान के इतिहास में, उचित सोच के उद्देश्य की महत्त्वता की अनदेखी करना मुश्किल है। निःसंदेह, ज़्यादातर ईश्वरीय-ज्ञान के लेखों की प्राथमिक रुचि, यही दिमागी चिन्ता रही है।

कुछ समय के लिये लूइस बरखौफ की सिस्टमैटिक थियोलौजी के भाग 3 की विषय सूची पर ध्यान करें। इस अध्याय की विषय-वस्तु "मसीह के व्यक्तित्व और कार्य के सिद्धांत" को इस प्रकार दिखाती है:

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

मसीह का व्यक्तित्व
I. इतिहास में मसीह के सिद्धांत
II. मसीह के नाम और उसके स्वरूप
III. मसीह का एक-व्यक्तित्व

मसीह की अवस्थाएँ
I. निन्दा की अवस्था
II. महिमा की अवस्था

मसीह के पद
I. परिचय: भविष्यद्वक्ता का पद
II. याजकीय पद
III. प्रायश्चित्त के कारण और आवश्यकता
IV. प्रायश्चित्त का स्वरूप
V. प्रायश्चित्त के विभिन्न सिद्धांत
VI. प्रायश्चित्त का उद्देश्य एवं उसकी सीमा
VII. मसीह का बिचवई वाला कार्य
VIII. राजकीय पद

यह रूपरेखा कोई संदेह नहीं छोड़ती कि बरखौफ का मुख्य उद्देश्य, जब वह इन अध्यायों को लिख रहा है, तो यह है, कि, उसके पाठक उचित या सच्चे सिद्धांतों को सीखें, सही विचारों को समझें।

भूतकाल में, धर्म-विज्ञानियों के लिये, आज की तुलना में मसीही विश्वास की, किसी भी ऐरी-गैरी बात को पोप के आदेश के समान परम सत्य करार देना आसान होता था। लेकिन आज, संचार में बढ़ोत्तरी और संसार भर की जनसंख्या में बदलाव के साथ, हमें, मसीही धर्म के अलावा दूसरे धर्मों का सामना हर मोड़ पर करना पड़ता है; यह बात बहुत सारे लोगों को उलझन में डाल देती है जिसके कारण उनमें बहुत ही थोड़ी ताकत बचती है कि वे सत्य और सही सोच की खोज करें।

यहाँ तक कि बहुत से मसीही धर्म-विज्ञानी संदेह करते हैं कि क्या वास्तव में हम अपने विश्वास के पारम्परिक सच्चे दावों पर इतने निश्चिन्त हो सकते हैं। इस उलझन वाले रुझान के अलावा जो कि मसीही समाज के बाहर से आता है, हमें इस तथ्य पर भी ध्यान देना है कि ऐसे मसीहियों को ढूँढ़ना बहुत ही मुश्किल है, जो कि मुट्ठी भर आधारभूत सिद्धांतों पर सहमत हो पायेंगे।

इन वर्तमान रुझानों के बावजूद, हमें फिर से पुष्टि करनी चाहिये कि विकसित होती उचित (रूढ़िवादी) सोच, जिसे हम सच्चे सिद्धांतों का समुच्चय कहते हैं, ईश्वरीय-ज्ञान के प्रमुख उद्देश्यों में से एक होनी चाहिये। उचित (रूढ़िवादी) सोच को खोजने की चुनौती जिसका सामना आज हम कर रहे हैं हर मायने में अलग नहीं है। यीशु और उसके प्रेरितों ने भूमध्य सागर के संसार में फैली धार्मिक विविधताओं का सामना जैसे आज हम कर रहे हैं ठीक वैसे ही किया था। फिर भी, यीशु ने बिना किसी हिचकिचाहट के यह बोला था कि उसके चेलों को ऐसे लोग बनना है जो सत्य को खोजते हों।

स्मरण करें कि यूहन्ना 17 अध्याय उसके 17 पद में, वह पिता से इस प्रकार प्रार्थना करते हैं:

> सत्य के द्वारा उन्हें पवित्र कर: तेरा वचन सत्य है। (यूहन्ना 17:17)

यीशु सच्चे सिद्धांतों के प्रति बहुत चिंतित थे। उन्होंने इस बात की पुष्टि की कि उचित (रूढ़िवादी) सोच ईश्वरीय-ज्ञान के प्रमुख उद्देश्यों में से एक है, और उसके अनुयायी होने के नाते, हमें भी ऐसा ही करना चाहिये।

ईश्वरीय-ज्ञान के एक संकल्पनात्मक उद्देश्य को दिमाग में रख कर, आयें उचित (सच्चे) व्यवहार के उद्देश्य को देखें।

उचित व्यवहार

साधारण रूप में कहें, उचित व्यवहार का अर्थ है, ऐसे सिद्धांतों और शिक्षाओं का विकास करना जिनका ध्यान केंद्र सही व्यवहार (आचरण) या कार्यों में हो। आप स्मरण करेंगे कि विलियम ऐम्स ने ईश्वरीय-ज्ञान की अंतर-आत्मा का विवरण इस प्रकार दिया था, "परमेश्वर को समर्पित जीवित जीने" का सिद्धांत। परमेश्वर को समर्पित जीवन का एक पहलू है हमारा चाल चलन या हमारा व्यवहार। यह काफ़ी नहीं है कि हम ईश्वरीय-ज्ञान के तथ्यों के बारे में ठीक प्रकार से सोचें। हमें उन तथ्यों को व्यवहार, सही व्यवहार में कार्यशील बनाना है।

यह स्पष्ट है कि मसीही ईश्वरीय-ज्ञान को हमारी अगुवाई सही या ठीक कार्यों के लिये करनी चाहिये। जैसे कि, ईश्वरीय-ज्ञान में हम सीखते हैं कि हमें प्रार्थना, सुसमाचार प्रचार, आराधना, एक दूसरे की सेवा और ग़रीबों को दान देने का कार्य करना चाहिये। लेकिन एक ज़िम्मेवार मसीही ईश्वरीय-ज्ञान के लिये इन बातों को या दूसरे सत्यों को सीखना ही काफ़ी नहीं है। इन सच्चाइयों को सही कार्य में बदलना चाहिये, उचित व्यवहार में।

दुःख की बात है, कि, सुसमाचार पर विश्वास करने वालों को ईश्वरीय-ज्ञान के उचित व्यवहार के उद्देश्य में अपनी रुचि बनाये रखने में कई बड़ी चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। पहला, कलीसिया से बाहर के लोग हर समय इस झूठ से हमारे कान भरते रहते हैं कि कोई नैतिक माप नहीं हैं, कि कोई भी व्यवहार अपने आप में अच्छा या बुरा नहीं है। इसलिये इस बात पर ज़ोर दे-दे कर कि व्यवहार के सही और बुरे रास्ते हैं, हम में से कई अपनी संस्कृति के प्रवाह के विरोध में खड़े होकर, थक या परेशान हो जाते हैं।

लेकिन इन से हट कर, यहाँ तक कि चर्च के भीतर से भी उचित व्यवहार को निर्णायक उद्देश्य बनाने में हमारी कुछ खामोशी उन कार्यों से निकल कर आती हैं, जिनमें हम मसीही होने के नाते बीते कल में असफल रहे हैं। सत्य के नाम पर चर्च ने कई पाप किये हैं। चर्च के इतिहास को देखें तो हम भयंकर बुरे कार्यों को पायेंगे, जिन्हें गंभीर ईश्वरीय-ज्ञान के आधार पर समर्थन मिला। इतिहास का यह दुःखद पहलू है कि धार्मिक लोग, यहाँ तक कि सच्चे मसीही भी, अपने ईश्वरीय-ज्ञान का प्रयोग हर तरह के भयावह पापों को उचित ठहराने के लिये करते हैं।

लेकिन इन गंभीर समस्याओं के बावजूद, उचित व्यवहार अभी भी बहुत आवश्यक है क्योंकि हमारा व्यवहार अभी भी परमेश्वर के लिये मायने रखता है। हमारे अच्छे और बुरे कार्य हमारे अनंत के इनामों को अभी भी प्रभावित करते हैं। हमारे अच्छे काम जिन्हें हम करते हैं हमारे मसीही भाइयों की सेवा के लिये परमेश्वर के साधन हो सकते हैं और हम अपने अच्छे व्यवहारों के द्वारा अविश्वासी संसार के सामने मसीह के लिये एक प्रभावशाली गवाही दे सकते हैं। इन तथा अन्य कारणों के लिये, उचित व्यवहार को ईश्वरीय-ज्ञान का महत्वपूर्ण उद्देश्य अभी भी होना चाहिये। इस प्रयास के कई स्तरों पर हमें सावधान रहने की ज़रूरत है; हमारे कार्यों के हर एक मोड़ पर नम्रता और प्रेम की पहचान होनी चाहिये। और मसीही जीवन को हमें सिर्फ़ कार्यों में नहीं बदल देना चाहिये। फिर भी ईश्वरीय-ज्ञान को सिर्फ़ विचारों की ही उचितता पर ध्यान नहीं देना चाहिये, लेकिन उसे उन कार्यों के प्रकार की शिक्षा के साथ होना चाहिये जो कि हमारे पास, हमारे साथ में होने चाहिये।

याकूब 2 अध्याय, 19 पद में, वह इन शब्दों को लिखता है:

> **तुझे विश्वास है कि एक ही परमेश्वर है; तू अच्छा करता है। दुष्टात्मा भी विश्वास रखते, और थरथराते हैं। (याकूब 2:19)**

यहाँ तक कि शैतान भी, एक मायने में उचित सोच वाला है। लेकिन शैतान की उचित सोच उसके लिये किस काम की है?

मुझे विश्वास है कि शैतान, परमेश्वर के त्रिएक होने पर विश्वास करता है; वह विश्वास करता है कि यीशु पापियों के लिये मरा; वह विश्वास करता है कि पुनरुत्थान हुआ था; वह अनुग्रह से विश्वास के द्वारा उद्धार के सच्चे सुसमाचार को जानता है। फिर भी, ये सच्चे विश्वास, शैतान के लिये कोई अनंत काल का फ़ायदा नहीं देते क्योंकि वह उचित सोच से उचित व्यवहार की ओर नहीं जाता है, जो कि एकमात्र सच्चे परमेश्वर की आराधना एवं सेवा करना है। हम लोगों को उचित व्यवहार को मसीही ईश्वरीय-ज्ञान का दूसरे दर्जे का उद्देश्य बनाने की परीक्षा से बचना चाहिये; उचित व्यवहार को ईश्वरीय-ज्ञान के प्रमुख उद्देश्यों में से एक होना चाहिये।

उचित सोच और उचित व्यवहार के साथ ईश्वरीय-ज्ञान की एक और उद्देश्य की चर्चा करनी चाहिये। हम इस ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्य को "उचित भावनाएँ" कहेंगे जिसका अर्थ है, "सही या ठीक भावनाएँ या मनोभाव।"

उचित भावनाएँ

परमेश्वर के लिये जीवन जीने में इस बात को निश्चित करना शामिल है कि हमारे हृदय की गहराई की भावनाएँ उसकी सेवा के लिये अर्पण हैं: हमारी खुशियाँ, हमारी निराशाएँ, हमारी उत्सुकताएँ, हमारा गुस्सा, हमारे उल्लास, और बहुत सारी दूसरी भावनाओं को हमें परमेश्वर की इच्छा के अनुकूल बनाना है। दुर्भाग्य से, यदि कोई ईश्वरीय-ज्ञान का उद्देश्य है जिसको शैक्षिक धर्म-विज्ञानियों ने नज़र अंदाज़ किया है, तो वह है उचित भावनाओं का उद्देश्य। ईश्वरीय-ज्ञान के भावनात्मक पहलुओं का नज़र अंदाज़ कम से कम दो कारणों के लिये किया जाता है।

पहला, कई शैक्षिक धर्म-विज्ञानी भावनाओं को दिखाने या उनकी पढ़ाई करने में मनोवैज्ञानिक रीति से अयोग्य रहते हैं। वास्तव में, अकसर दिल से कठोर शैक्षिक ढाँचे के प्रभाव में, लोग शैक्षिक ईश्वरीय-ज्ञान को जीविका (व्यवसाय) बनाते हैं, प्रोफ़ेसर या अध्यापक बनते हैं, ताकि वे जीवन के भावनात्मक पहलू का सामना करने से बच जायें। परिणाम स्वरूप, यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि शैक्षिक ईश्वरीय-ज्ञान के लेखों में आप उत्सुकता, आनंद, दर्द, सहानुभूति, देखभाल और प्यार को उतना ही थोड़ा पाते हैं जितना कि वनस्पति विज्ञान की पाठ्यक्रम वाली पुस्तक में इन बातों को। यदि आपने ज़्यादा शैक्षिक ईश्वरीय-ज्ञान की पुस्तकों को पढ़ा है, तो आप जानते हैं कि भावनात्मक बातों पर बहुत थोड़ा ध्यान दिया जाता है, अकसर इसलिये क्योंकि व्यावसायिक धर्म-विज्ञानी लोग भावनाओं को महत्व नहीं देते, या वे अपने आप से भावनात्मक रूप से परिपक्व नहीं होते।

उचित भावनाओं के प्रति एक दूसरा रोड़ा यह है कि कई सुसमाचार पर विश्वासी इस विश्वास के जाल में फँस जाते हैं कि भावनाएँ अनैतिक हैं; कि वे नैतिकता के आधार पर उदासीन हैं। वे कहते हैं कि कुछ भावनाओं के लिये यह कहना सही नहीं है, कि वे सही हैं या गलत हैं। वे विश्वास करते हैं कि उचित भावनाओं, या सही भावनाओं का विचार पूर्णतः बहकावा है। भावनाओं का अनैतिक दृष्टिकोण चाहे कितना भी फैला हुआ क्यों न हो, यह बाइबल के दृष्टिकोण से न होकर वर्तमान काल के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुरूप है।

ईश्वरीय-ज्ञान के लेखों में भावनाओं का बहुत अच्छा उदाहरण पौलुस की पत्रियाँ हैं। हम सब जानते हैं कि पौलुस की चिन्ता उचित सोच (रूढ़िवादिता) के साथ थी। वह सत्य को खोजने के लिये समर्पित था। लेकिन बार-बार, जब वह सत्य के बारे में लिखता है, पौलुस अपनी भावनाओं को छिपा नहीं पाता है। उचित सोच पर उसके मनन अचानक उठने वाली भावनाओं को पैदा करते हैं।

1 और 2 कुरिन्थियों पर टीका लिखते समय, मैं स्मरण कर सकता हूँ कि कितनी बार ईश्वरीय-ज्ञान पर बहस करने के बीच में, पौलुस द्वारा अपनी भावनाओं को दिखाने पर मुझे बड़ा आश्चर्य होता था। या

उदाहरण के लिये, रोमियों की पुस्तक को लें, जो कि पौलुस की सबसे गहन ईश्वरीय-ज्ञान का लेख है। 9 अध्याय से 11 तक, भविष्य के लिये परमेश्वर की योजना में शामिल यहूदी और अन्यजातियों के जटिल प्रश्न पर मनन करने के बाद, पौलुस महिमा करते हुए भावुक हो जाता है। जैसा कि हम रोमियों 11 अध्याय पद 33 से 36 तक पढ़ते हैं:

> आहा! परमेश्वर का धन और बुद्धि और ज्ञान क्या ही गंभीर है! उसके विचार कैसे अथाह, और उसके मार्ग कैसे अगम हैं! "प्रभु की बुद्धि को किसने जाना? या उसका मंत्री कौन हुआ? या किसने पहले उसे कुछ दिया है जिसका बदला उसे दिया जाए?" क्योंकि उसी की ओर से, और उसी के द्वारा, और उसी के लिये सब कुछ है। उसकी महिमा युगानुयुग होती रहे: आमीन। **(रोमियों 11:33-36)**।

अब कब आपने आखिरी बार किसी शैक्षिक ईश्वरीय-ज्ञान पर शोध कार्य के बीच में ऐसा कुछ पढ़ा था?

आपसी निर्भरता

अब जबकि हमने ईश्वरीय-ज्ञान के तीन प्रमुख उद्देश्यों का परिचय दे दिया है, तो हमें उनकी आपसी निर्भरता पर बात करने की आवश्यकता है। उनकी आपसी निर्भरता एक महत्वपूर्ण कारण है कि हमें क्यों ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों में से किसी भी एक को नज़र अंदाज़ नहीं करना है। वे आपस में ऐसे जकड़े हुए हैं कि हम बाकी दो में प्रभावशाली हुए बिना, किसी एक में हम प्रभावी नहीं हो सकते।

यह समझाने के लिये कि हमारा मतलब क्या है, हम तीन बातों पर गौर करेंगे। पहले, हम देखेंगे कि उचित सोच दूसरों को कैसे बढ़ाता है। फिर हम देखेंगे कि उचित व्यवहार ईश्वरीय-ज्ञान के अन्य दो उद्देश्यों को कैसे बढ़ाता है। और तीसरा, हम इस बात को देखेंगे कि उचित भावनाएँ अन्य दो में कैसे सहयोग देती हैं। आयें, यह देखने के द्वारा, हम इस बात की शुरूआत करें कि उचित सोच या सही सोच, ईश्वरीय-ज्ञान के अन्य दो उद्देश्यों को कैसे बढ़ावा देती है।

उचित सोच

सुसमाचार पर विश्वास करने वाले ज़्यादातर लोग सैद्धांतिक रूप में इस बात से बहुत कुछ अवगत हैं, कि उचित व्यवहार और उचित भावनाओं के प्रगट होने के लिये, कुछ मायनों में उचित सोच, ज़रूरी है। हम शैक्षिक आधार वाले और चर्चित धर्म-विज्ञानियों से सीखते हैं कि पहले हमें सत्य को समझना चाहिये और फिर उसको अपने जीवनों में लागू करना चाहिये। मसीहों के लिये यह बहुत ही सामान्य है कि सीधे-सामने दिखने वाले नमूने के साथ कार्य करें: "जो मैं विश्वास करता हूँ वह मेरे जीवन जीने के तरीके को प्रभावित करेगा।" और यह सच भी है। जो बातें हम सत्य के बारे में सीखते हैं वे गहराई से हमारे जीवन जीने के तरीके को प्रभावित करती हैं।

जैसे-जैसे ईश्वरीय-ज्ञान की पढ़ाई के द्वारा हमारी उचित सोच बढ़ती है, जिसे हम सत्य समझते हैं वह या तो हमारे व्यवहारों और भावनाओं की पुष्टि करेगा या उन्हें चुनौती देगा। शायद आप ऐसे व्यक्ति हो सकते हैं जो स्वाभाविक रूप से दूसरों के लिये सहानुभूति का अनुभव करते हों और उन भावनाओं पर कार्य भी करते हों। अब, जैसे-जैसे आप बाइबल के तथ्यों को सीखते हैं, जैसे कि, परमेश्वर के स्वरूप में मानवता और दूसरों के प्रति दया एवं कृपा, आप पायेंगे कि आपके पहले के व्यवहार और भावनाएँ, जिनके लिये आप में स्वाभाविक रुझान था, अब आपके उचित विचारों के विकास से उनकी पुष्टि हो रही है और उनका बढ़ावा हो रहा है।

ठीक इसी समय, उचित सोच का दृष्टिकोण आपके व्यवहारों और भावनाओं को चुनौती भी दे सकता है। शायद आप ऐसे व्यक्ति हैं जो स्वार्थीपन और लालच से संघर्ष कर रहे हैं। आप ग़रीबों के प्रति उदासीन हैं और आप उनके दुःखों को कम करने के लिये कुछ सहायता नहीं करते हैं। तब जैसे-जैसे आपके ईश्वरीय-ज्ञान की सोच, बाइबल पर आधारित बनेगी, तो आपकी उचित सोच की दृष्टिकोण से आपके व्यवहारों और भावनाओं को चुनौती का सामना करना पड़ेगा। इस प्रकार एवं कई दूसरे प्रकारों से, हमारी उचित सोच का विकास, हमारे जीवन जीने के तरीकों की पुष्टि करता है और उन्हें चुनौती देने के द्वारा, उचित व्यवहारों और उचित भावनाओं को बढ़ावा भी देता है।

उचित व्यवहार

आयें अब दूसरा तरीका देखें जिसमें हमारे ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्य एक दूसरे पर निर्भर रहते हैं। उचित व्यवहार हमारी उचित सोच और हमारी उचित भावनाओं को कैसे बढ़ावा देते हैं? हमारा व्यवहार हमारे विश्वास और हमारी भावनाओं को किस प्रकार प्रभावित करता है?

एक ओर, हमारे व्यवहार या कार्य, उस बात पर जिस में हम विश्वास करते हैं, उसकी पुष्टि कर सकता है या उसे चुनौती दे सकता है। इसका एक सजीव उदाहरण इस प्रकार अकसर देखने में आता है- जब आप ईश्वरीय-ज्ञान के गंभीर छात्र से यह प्रश्न पूछते हैं, "हमें प्रार्थना क्यों करनी चाहिये?"

अकसर कई बार, जब विश्वासी लोग प्रार्थना करने का इतना अभ्यास नहीं करते हैं, तो इस प्रश्न के लिये उनका उत्तर बहुत ही कमजोर होता है, कुछ इस तरह का, "हम प्रार्थना इसलिये करते हैं क्योंकि परमेश्वर ने इसकी आज्ञा दी है।" इस उत्तर में चाहे कितनी भी सच्चाई क्यों न हो, मैंने कभी भी ऐसे प्रार्थना के योद्धा को नहीं जाना है, (कोई ऐसा व्यक्ति जो कि अपने संपूर्ण विकसित प्रार्थना वाले जीवन के लिये जाना जाता हो), जो इस तरह से उत्तर देगा। कई वर्षों तक प्रार्थना करने का अनुभव व्यक्ति को प्रार्थना के कई दूसरे कारणों को देखने के लिये संवेदनशील बनाता है। यह सच है कि हमें प्रार्थना इसलिये करनी चाहिये क्योंकि हमें यह करने की आज्ञा मिली है।, लेकिन प्रार्थना के अनुभव की कमी, हमें प्रार्थना के लिये बाइबल पर आधारित प्रोत्साहनों को देखने से अकसर रोक देती है।

इसके विपरीत, हमारे कार्य हमें और ज़्यादा उचित सोच की ओर ले जा सकते हैं। जब विश्वासी लोग प्रार्थना में ज़्यादा अनुभवी बनेंगे, वे बाइबल में दिये गये प्रार्थना करने के विभिन्न कारणों को स्पष्टता से देख पायेंगे। हम प्रार्थना इसलिये करते हैं क्योंकि परमेश्वर ही हमारी प्रार्थनाओं का उत्तर देने के योग्य है। हम प्रार्थना इसलिये करते हैं क्योंकि हमें परमेश्वर की ज़रूरत है। हम प्रार्थना इसलिये करते हैं क्योंकि- याकूब अपनी पत्री के 5 अध्याय के 16 पद में कहता है:

> **धर्मी जन की प्रार्थना के प्रभाव से बहुत कुछ हो सकता है। (याकूब 5:16)**

धार्मिक व्यवहार की कमी हम से इन ईश्वरीय-ज्ञान पर आधारित विश्वासों को छीन लेती है, लेकिन प्रार्थना में पवित्र जीवन जीने का अनुभव हमारे विश्वासों को चुनौती देता, उनकी पुष्टि करता, और उन्हें बढ़ावा देता है।

इससे हट कर, हमारे कार्य ईश्वरीय-ज्ञान के भावनात्मक पहलुओं को भी प्रभावित करते हैं। जो कार्य हम करते हैं वह उस पर आधारित होता है, जिसे हम महसूस कर सकते हैं, या तो जो हम महसूस करते हैं उसकी पुष्टि करने के द्वारा या उन्हें चुनौती देने के द्वारा। उदाहरण के लिये, जब विश्वासी लोग गंभीर पाप में पड़ते हैं, अकसर ऐसा होता है कि वे दोष और दोषानुभव के भावनात्मक अनुभव से गुजरते हैं। ठीक उसी समय, जब हम वह कार्य करते हैं जो सही है, हम अकसर परमेश्वर की मंजूरी और आशीष के आनंद एवं सुख को पाते हैं।

जैसा कि हमने देखा है, हम जो विश्वास करते हैं, कैसे वह हमारे कार्यों एवं अनुभवों को प्रभावित करता है; और हम जो कार्य करते हैं वह उसको प्रभावित करता है, कि हम कैसे विश्वास एवं महसूस करें।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

अब हमें अपना ध्यान कुछ समय के लिये ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों की निर्भरता के आखिरी पहलू पर करना चाहिये: जो हम विश्वास करते हैं और जो हम कार्य करते हैं, उन्हें, हमारी भावनाएँ, कैसे प्रभावित करती हैं।

उचित भावनाएँ

इसीलिये हम भजन संहिता में पाते हैं कि उनके लिखने वालों की भावनाएँ, उनकी सोच और उनके कार्यों को किसी न किसी तरीके से प्रभावित करती हैं। एक ओर, जब भजन का लिखने वाला अपने आप को त्यागा हुआ महसूस करता है, तो उसकी उचित सोच की अभिव्यक्ति मुख्यतः उन कष्टों के लिये है जिनसे वह गुजर रहा है और कैसे परमेश्वर पर उसका विश्वास इस दुःख में उसका सहायक बनता है। उदाहरण के लिये दाऊद भजन 13 के 1 और 3 पद में पुकारता है:

> हे परमेश्वर, कब तक! क्या तू सदैव मुझे भूला रहेगा? तू कब तक अपना मुखड़ा मुझसे छिपाए रहेगा?... हे मेरे परमेश्वर यहोवा, मेरी ओर ध्यान दे और मुझे उत्तर दे, ...। **(भजन 13:1, 3)**

इससे हट कर, भजन लिखने वालों के कार्य भी उनकी भावनाओं से प्रभावित हैं। जब वे असहाय हैं, भजन के लिखने वाले चुपचाप निष्क्रिय नहीं हैं; वे खुल कर रोते हैं; वे बीमार पड़ते हैं। जैसा कि भजन का लिखने वाला भजन 6 उसके 6 पद में लिखता है:

> मैं कराहते कराहते थक गया; मैं अपनी खाट आँसुओं से भिगोता हूँ; प्रति रात मेरा बिछौना भीगता है। **(भजन 6:6)**

ठीक इसी समय, जब भजन के लिखने वाले हर्ष और उल्लास से भरे हैं, वे नाचते और स्तुति करते हुए प्रभु परमेश्वर की सेवा करने के लिये बलवन्त महसूस कर रहे हैं। जैसा कि हम भजन 30 उसके 11 पद में पढ़ते हैं:

> तू ने मेरे लिये विलाप को नृत्य में बदल डाला; तू ने मेरा टाट उतरवाकर मेरी कमर में आनन्द का पटुका बाँधा है, **(भजन 30:11)**।

इन उदाहरणों के द्वारा हम देख सकते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान के तीन उद्देश्य, उचित सोच, उचित व्यवहार और उचित भावनाएँ पुरज़ोर तरीके से आपस में एक दूसरे पर निर्भर हैं। जो हम विश्वास करते हैं उसका हमारे कार्यों और हमारे आचरण पर कुछ प्रभाव रहता है। हमारे व्यवहार हमारे विश्वासों और हमारी भावनाओं को प्रभावित करते हैं। और हमारी भावनाएँ सदा हमारे व्यवहारों और विश्वासों को किसी न किसी रूप में प्रभावित करती हैं।

ईश्वरीय-ज्ञान के इन तीन उद्देश्यों की आपसी निर्भरता की समझ हमें एक गंभीर बात की चेतावनी देती है। किस उद्देश्य को बाकी अन्य उद्देश्यों के ऊपर प्राथमिकता दें? क्या हम ज़्यादा ध्यान उचित सोच को दें या उचित व्यवहार को या उचित भावनाओं को?

प्राथमिकताएँ

सुसमाचार पर विश्वास करने वाले कई लोग इस प्रश्न का सीधा-सरल उत्तर देंगे। उनका विश्वास है कि परमेश्वर ने हमें ऐसा बनाया है कि पहले हम अपने विश्वासों को ठीक करने के लिये मनन करें, जिससे कि वे हमारे व्यवहारों को बदलें और हमारे व्यवहार फिर हमारी भावनाओं को बदलेंगे। प्राथमिकताओं

का यह नमूना कुछ इस तरीके से कहा जा सकता है: "ठीक सोचो, ठीक कार्य करो, और फिर आप ठीक महसूस करेंगे।" ईश्वरीय-ज्ञान के प्रति इस प्रकार का दृष्टिकोण हर ओर फैला हुआ है।

अब निःसंदेह, इसमें कोई शक नहीं कि यह योजना पूरी तरह से वैध है। वैसे देखा जाये तो इसमें कोई गलत बात भी नहीं है, लेकिन समस्या तब पैदा होती है जब हम इन प्राथमिकताओं का हर समय इसी क्रम ही में अनुसरण करते हैं। क्योंकि ऐसा लगता है कि पहले स्तर की सोच से हट कर हम कभी आगे नहीं बढ़ते, जिससे हमारा ईश्वरीय-ज्ञान निर्बल बना देने वाला बन जाता है। अपने व्यवहारों और भावनाओं के ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित करने का कार्य नज़र अंदाज़ किया जाता है, या ये कहें कि इन्हें गौण (दूसरे दर्जे) का समझा जाता है।

ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों के बारे में सोचना उसी तरह से उपयोगी है जिस तरह से हम मानव शरीर की महत्वपूर्ण प्रक्रियाओं के बारे में सोचते हैं। हम सब जानते हैं कि हमारे पास जीवन-दायक शारीरिक तंत्र हैं: केंद्रीय स्नायु तंत्र, पाचनक्रिया तंत्र, फेफड़े का तंत्र, हृदय-रक्त-वाहिका तंत्र। अब इसमें से किसे प्राथमिकता देनी चाहिये? इन तंत्रों के बीच में आपसी संबंधों के बारे में सोच का सही क्रम क्या है? हम सोच सकते हैं कि कैसे केंद्रीय स्नायु तंत्र, पाचनक्रिया तंत्र को प्रभावित करता है, लेकिन हम यह भी सोच सकते हैं कि कैसे पाचनक्रिया तंत्र, केंद्रीय स्नायु तंत्र को प्रभावित करता है। इन आपसी संबंधों के ज़रिये अपना कार्य करने के कई सारे वैध और उपयोगी रास्ते हैं।

तो फिर, ईश्वरीय-ज्ञान के तीन उद्देश्यों की आपसी निर्भरता के बारे में जो कुछ हमने देखा, वह यह दिखाता है कि निरंतर एक ही योजना को चुनना या एक ही पर ध्यान देना पर्याप्त से कम है। जैसा कि हम कई बार आगे इन अध्यायों में देखेंगे, हमारे विश्वास और हमारे कार्य और हमारी भावनाएँ बहुत सारे आपसी संबंधों का एक जाल बनाते हैं। अपने संबंधों में एक सीधी रेखा में होने के बजाय, वे उस हद तक बहु-रेखीय, या आपस में संबंधित हैं कि हम हर बार किसी एक प्राथमिकता को नहीं चुन सकते। यह सच है कि पहले हमें ठीक से सोचना चाहिये ताकि हम ठीक कार्य कर सकें और फिर ठीक महसूस कर सकें। लेकिन कई समयों में हमें ठीक कार्य भी करना चाहिये ताकि हम ठीक से सोच सकें और ठीक प्रकार से महसूस कर सकें। और हमें ठीक प्रकार से महसूस करना चाहिये ताकि हम ठीक से सोच सकें और ठीक कार्य कर सकें। पवित्र आत्मा अपने लोगों को ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों की ओर कई विभिन्न तरीकों में ले कर चलता है।

फिर हम कैसे निर्णय लें कि क्या करना चाहिये? हम कैसे निर्णय लें कि क्या सही सोच पर ज़ोर दें या व्यवहार पर या भावनाओं पर? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों का, किसी भी परिस्थिति में सबसे ज़्यादा ज़रूरत होने पर प्राथमिकता या ज़ोर देने के लिये हमें अपनी बुद्धि का इस्तेमाल करना है।

क्योंकि जीवन की नैय्या हर समय खिसकती रहती है, संतुलन को बनाना कुछ और नहीं क्षण भर की एक घटना है। जीवन एक उथल-पुथल होते जहाज़ की छत के समान है। कभी ये एक ओर झुकती है, और अन्य समयों पर दूसरी ओर। इधर-उधर खिसकते जहाज़ की छत पर संतुलन बनाये रखने के लिये, इस बात पर निर्भर होते हुए कि हमारे पाँवों के नीचे क्या हो रहा है, हमें सीखना है कि एक ओर को कैसे झुकें और फिर दूसरी ओर को कैसे। यदि हम ठीक दिशा की ओर झुकना नहीं सीखेंगे, तो पक्का है कि हम जहाज़ की छत पर गिर पड़ेंगे। ईश्वरीय-ज्ञान के हर एक कार्य को सीखने का कोई निर्धारित रास्ता नहीं है। हर बार जब हम ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों को पूरा करने की कोशिश करते हैं, तो हमें अपने आप से पूछना चाहिये, "किस बात की आवश्यकता है?; हमें और जो हमारे आस-पास हैं उनकी सबसे ज़्यादा ज़रूरत इस समय क्या है?" तब हम उस समय के लिये उपयुक्त दिशा निर्धारण को स्थापित करते हैं, और हम ईश्वरीय-ज्ञान के सभी उद्देश्यों को अपने पूरे हृदय से खोजते हैं।

ऐसे विश्वासी लोग, जिन्हें नहीं मालूम कि अपनी प्राथमिकताओं को कैसे बदलना है, बड़ी हानि उठा सकते हैं। जब हम निरंतर उचित सोच पर ज़ोर जोर देते हैं, हम आसानी से बौद्धिकतावाद में फिसल

जाते हैं। जब हम निरंतर कार्य या व्यवहार पर ज़ोर देते हैं तो हम आसानी से विधिवादिता में फिसल जाते हैं। और जब हम निरंतर ईश्वरीय-ज्ञान के भावनात्मक उद्देश्य पर ज़ोर देते हैं तो भावुकतावाद में फिसल जाते हैं। लेकिन जैसे-जैसे जीवन की नैय्या एक ओर या दूसरी ओर पलटती है, उस समय यह सीखने से कि क्षण भर के लिये कैसे संतुलन बनाये रखें, यह बात हमें चरम छोर से बचा सकती है। तो हम में से हर एक को यह प्रश्न पूछने की आवश्यकता है, " इनमें से कौन सा रुझान मेरे द्वारा ईश्वरीय-ज्ञान के कार्यान्वित होने में कार्यरत या प्रगट होता है?" क्या मेरा रुझान बौद्धिकतावाद की ओर है; क्या मेरा रुझान विधिवादिता या भावुकतावाद या इनमें से किसी दो की ओर है? हमारा स्वाभाविक रुझान चाहे कुछ भी क्यों न हो, हमें उन ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों पर ध्यान देने के लिये मेहनत करने की आवश्यकता है जिनके लिये हमें लगता है कि हमने उन्हें नज़र अंदाज़ किया है।

अब जब कि हमने ईश्वरीय-ज्ञान को परिभाषित कर लिया है और ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्यों की जाँच कर ली है, हमें अपना ध्यान अपने तीसरे विषय की ओर मोड़ना चाहिये, ईश्वरीय-ज्ञान के विषय। जब हम ईश्वरीय-ज्ञान को कार्यान्वित करते हैं तो चिन्ता के कौन से क्षेत्र ध्यान में आते हैं? किन विषयों के नीचे हमें उचित सोच, उचित व्यवहार और उचित भावनाओं को रखना चाहिये?

विषय

किसी व्यक्ति को ईश्वरीय-ज्ञान के महान कार्य से परिचित कराना उस कार्य के समान है, जैसे कि, किसी व्यक्ति को ब्रम्हाण्ड से परिचित कराना। कम कहें, तो यह बहुत ही कठिन कार्य है। इसलिये, ईश्वरीय-ज्ञान में, इन पाठों पर, हमें अपना ध्यान सिर्फ़ थोड़े से विषयों तक ही सीमित करना पड़ेगा।

हमारी रुचि के विषयों को समझने के लिये, हमें दो बातों पर गौर करना होगा: पहला, धर्म-विज्ञानियों के सामने उपलब्ध कई विकल्प; और दूसरा, उन चुनावों का जो हम इन पाठों में करेंगे। आयें पहले हम उन विकल्पों को देख लें जो कि ईश्वरीय-ज्ञान की औपचारिक पढ़ाई शुरू करने वाले के सामने होती हैं।

कई विकल्प

जब लोग पहली बार ईश्वरीय-ज्ञान की गंभीर पढ़ाई की शुरूआत करते हैं, वे इसके कार्य-क्षेत्र के फैलाव को देख कर अभिभूत हो जाते हैं। ईश्वरीय-ज्ञान के विषय में यह सोचना कि इसमें विषयों की लम्बी सूची शामिल है, सामान्य है। मसीही विश्वास के पिछले दो सहस्राब्दियों के दौरान, उन लोगों ने कई विषयों पर चर्चा की है, जिन्होंने ईश्वरीय-ज्ञान पर ज़्यादा ध्यान केंद्रित किया था। विषयों की यह सूची हर कलीसियाई वर्ग में एक दूसरे से भिन्न रही हैं, लेकिन इनमें काफ़ी समानताएँ है कि हम प्रमुख ईश्वरीय-ज्ञान के भागों को नाम लेकर गिन सकते हैं।

ईश्वरीय-ज्ञान की पढ़ाई में सामान्यतः कुछ व्यवहारिक विषय भी शामिल हैं जैसे मिशन्स, सुसमाचार प्रचार, पक्षमण्डन शास्त्र (विश्वास का बचाव करना), आराधना, दया की सेवाएँ, मसीही परामर्श देना और उपदेश तैयार करना (या प्रचार तैयार करना)। इसमें कई सारे सैद्धांतिक या अमूर्त विषयों की लम्बी सूची भी शामिल है: मुक्ति का ज्ञान (उद्धार का सिद्धांत), कलीसियाई विज्ञान (कलीसिया या चर्च के सिद्धांत), मानवविज्ञान (मानवता का सिद्धांत), पवित्र आत्मा शास्त्र (पवित्र आत्मा के सिद्धांत), ख्रीस्त-शास्त्र (मसीह के सिद्धांत), उचित ईश्वरीय-ज्ञान (परमेश्वर के सिद्धांत), युगांत विज्ञान (युग के अंत के सिद्धांत), बाइबल पर आधारित ईश्वरीय-ज्ञान (बाइबल में वर्णित छुटकारे के इतिहास का ईश्वरीय-ज्ञान),

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

योजनाबद्ध ईश्वरीय-ज्ञान (बाइबल की शिक्षा का तर्कसंगत वर्गीकरण), ऐतिहासिक ईश्वरीय-ज्ञान (कलीसिया के इतिहास में सिद्धांतों के विकास की जाँच), और भाष्य विज्ञान (या व्याख्या)।

अब ज़्यादा समय के लिये, पारम्परिक शैक्षिक ईश्वरीय-ज्ञान ने मुख्यतः उचित सोच की श्रेष्ठता के आधार पर इन विषयों पर ध्यान दिया है। एक आदर्श सैमनरी की कक्षा इनमें से किसी भी विषय पर ध्यान को, या तथ्यों को ठीक करने के लिये देगी, और इस बात की पुष्टि करेगी कि हर एक जन ठीक से सोच रहा है कि नहीं। कभी-कभार, सैमनरी की कुछ कक्षाएँ कौशल सीखने में ध्यान देते हैं। कक्षाएँ जो कि आराधना, सुसमाचार प्रचार, उपदेश तैयारी, और मसीही परामर्श पर होती हैं, सामान्यतः उनका बहुत कुछ ध्यान कौशल या उचित व्यवहार पर होता है। दुर्भाग्य से, सैमनरी की कक्षाओं के लिये उचित भावनाओं, या ईश्वरीय-ज्ञान के भावनात्मक पहलू पर ध्यान देना सामान्य बात नहीं है, यहाँ तक कि उपदेश तैयार करने की कक्षा में भी नहीं। फिर भी, जैसा कि हमने इस पाठ में सीखा है, ईश्वरीय-ज्ञान के विषयों पर और ज़्यादा सही रुझान, सभी तीनों दिशाओं पर गहराई से चिंतन माँगता है। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि ईश्वरीय-ज्ञान के छात्र के सामने जो कार्य है वह विशाल है। ईश्वरीय-ज्ञान के हर विषय के साथ-साथ पढ़ने के लिये अनगिनत पहलू हैं।

ईश्वरीय-ज्ञान के कार्यान्वित करते समय विकल्पों की लम्बी सूची, चुनाव की आवश्यकता की ओर ले चलती है।

चुनाव

ईश्वरीय-ज्ञान का नया छात्र एक गंभीर खतरे का अकसर सामना करता है। ईश्वरीय-ज्ञान के विषयों की संख्या और जटिलता डर पैदा करने वाली हो सकती है। वास्तव में, कार्य क्षेत्र इतना बढ़ा है कि कई छात्र तो इन विषयों के मूलभूत तथ्यों को बड़ी मुश्किल से सीख पाते होंगे। जिसके फलस्वरूप छात्र अपने आप को सिर्फ़ उचित सोच तक ही ध्यान केंद्रित करता हुआ पाते हैं, क्योंकि दूसरे अन्य पहलुओं को खोजने के लिये उनके पास बहुत थोड़ा समय बाकी रह जाता है।

इन पाठों में, ईश्वरीय-ज्ञान के विषयों की बहुत सारी संख्या के डर से बचने के लिये हम अपना ध्यान थोड़े विषयों तक ही सीमित रखेंगे। हम उन ईश्वरीय-ज्ञान के विषयों पर मनन करेंगे जो कि एक पास्टर (पादरी) से संबंधित ईश्वरीय-ज्ञान की चिंताएँ होती हैं। इससे हमारा मतलब यह है- विश्वासों, व्यवहारों और भावनाओं के वे समुच्चय जो कि पादरियों और कलीसिया के अगुओं के लिये स्पष्ट रीति से लाभकारी हैं। इन पाठों में हम ईश्वरीय-ज्ञान के संपूर्ण विश्वकोश को प्रस्तुत करने का प्रयास नहीं कर रहे हैं। इसके विपरीत हम अपने आप से इन प्रश्नों को पूछ रहे होंगे। कलीसिया की अगुवाई के लिये प्रशिक्षण ले रहे लोगों को क्या मालूम होना चाहिये; उन्हें क्या जानने की आवश्यकता है; उन्हें क्या करने की आवश्यकता है; और ईश्वरीय-ज्ञान के अनुरूप महसूस करने के लिये उन्हें किस बात की आवश्यकता है। ईश्वरीय-ज्ञान की पढ़ाई की पद्धति में उन्हें कैसे आगे बढ़ने की आवश्यकता है?

खुशी की बात यह है, कि, हमें इन प्रश्नों के उत्तरों का आविष्कार करने की ज़रूरत नहीं है। कलीसिया ने पहले ही से कई महत्वपूर्ण दिशाओं में इशारा दे रखा है। पिछली शताब्दियों में ईश्वरीय-ज्ञान की पढ़ाई जैसे-जैसे विकसित हुई है, कलीसिया के अगुवों की शिक्षा में पढ़ाये जाने वाले विषयों के प्रकारों को ले कर, दुनिया भर की विभिन्न कलीसियाई वर्गों में, सर्वसम्मति पैदा हुई है।

जिसके परिणाम स्वरूप, एक आदर्श सैमनरी का पाठ्यक्रम कुछ इस तरह दिखाई देता है। यह तीन प्रमुख भागों में विभाजित होता है: बाइबल पर आधारित भाग; ऐतिहासिक और सैद्धांतिक भाग; और व्यवहारिक भाग। ये तीन भाग उस प्रमुख कार्य को दिखाते हैं जिसमें पवित्र आत्मा ने कलीसिया के अगुवों के लिये ईश्वरीय-ज्ञान की शिक्षा के विकास में अगुवाई की है।

चलचित्र, अध्ययन मार्गदर्शिका एवं कई अन्य संसाधनों के लिये, हमारी वेबसाइट thirdmill.org पर जाएँ।

बाइबल पर आधारित भाग सामान्यतः पुराने नियम और नये नियम में विभाजित होता है। पाठ्यक्रम के ये हिस्से पवित्र शास्त्र की विषय-वस्तु पर ध्यान केंद्रित करते हैं और भविष्य के कलीसियाई अगुवों को बाइबल की व्याख्या से अवगत कराते हैं। सैद्धांतिक और ऐतिहासिक भाग सामान्यतः कलीसिया के इतिहास और योजनाबद्ध ईश्वरीय-ज्ञान में बँट जाता है। कलीसिया का इतिहास इस बात पर ध्यान देता है कि जैसे-जैसे मसीह की देह संसार के खिलाफ़ विभिन्न तरीकों से, और भिन्न-भिन्न समयों में संघर्ष कर रही थी, ऐसे में किस प्रकार से परमेश्वर ने कलीसिया में ईश्वरीय-ज्ञान का विकास किया। योजनाबद्ध ईश्वरीय-ज्ञान छात्रों को उस तरीके से अवगत करता है जिसमें कलीसिया ने बाइबल की शिक्षा को तर्क-संगत रीति से या योजनाबद्ध क्रम से व्यवस्थित किया है। फिर, व्यवहारिक भाग छात्र का ध्यान व्यक्तिगत आत्मिक विकास और व्यवहारिक मसीही सेवा के कौशल पर कराता है जैसे उपदेश तैयार करना और सुसमाचार प्रचार।

पाठों की इस श्रृंखला में हम जैसे-जैसे आगे बढ़ेंगे, हम इन ईश्वरीय-ज्ञान के भागों की रूपरेखाओं की महत्त्वता को पहचानेंगे। अपना खुद का नया रास्ता बनाने के बजाय, हम सिर्फ़ उन आयामों को व्यवस्थित और स्पष्ट करने की कोशिश करेंगे जिनको पवित्र आत्मा ने कलीसिया को करने के लिये, पहले ही से सिखा दिया है। फलस्वरूप, भविष्य के पाठों में हम तीन प्रमुख विषयों पर गौर करेंगे। बाइबल पर आधारित पढ़ाई का क्षेत्र कुछ-कुछ उस पढ़ाई से संबंधित होगा जिसको हम "पवित्र शास्त्र का भाष्य शास्त्र" कहते हैं। इन पाठों में ऐतिहासिक और सैद्धांतिक पढ़ाई का क्षेत्र कुछ-कुछ उस बात से संबंधित होगा जिसे हम "समुदायिक रूप में पारस्परिक संबंध" कहेंगे। और व्यवहारिक ईश्वरीय-ज्ञान बहुत कुछ हमारे "मसीही जीवन" के विभाग से संबंधित होगा।

हम उन तरीकों पर गौर करेंगे जिनमें ईश्वरीय-ज्ञान के ये क्षेत्र कार्य करते हैं, और जैसे-जैसे हम ईश्वरीय-ज्ञान की पढ़ाई करते हैं, वे कैसे आपस में मिलकर कार्य करते हैं। बौद्धिकतावाद के जाल में गिरने के बजाय, हम निरंतर अपने आप को याद दिलाते रहेंगे कि ईश्वरीय-ज्ञान के पाठ्यक्रम के हर एक भाग में उन तथ्यात्मक, व्यवहारात्मक, और भावनात्मक पहलुओं की आवश्यकता है, जिन को खोजा जाना है। जब हम पुराने नियम व नये नियम में पवित्र शास्त्र के भाष्य-शास्त्र को सीखते हैं, तब हमें सीखने की आवश्यकता है कि तथ्यों, व्यवहारों और भावनाओं को किस प्रकार ध्यान में रखना है। जब हम यह सीखते हैं कि कैसे कलीसिया एक समुदाय के रूप में पारस्परिक संबंध रखती है, तो हमें तथ्यों, व्यवहारों और भावनाओं की महत्त्वता को स्मरण रखने की ज़रूरत है। और जब हम मसीही जीवन पर ध्यान देते हैं, हम न सिर्फ़ उचित सोच पर ध्यान केंद्रित करें, बल्कि उचित व्यवहार और उचित भावनाओं पर भी। सभी तीनों स्तरों पर, तीनों विषय, पवित्र शास्त्र का भाष्य-शास्त्र; समुदाय में पारस्परिक संबंध; और मसीही जीवन; ईश्वरीय-ज्ञान के परिचय में हमारे प्रमुख विषय रहेंगे।

उपसंहार

इस पाठ में हमने सबसे मूलभूत प्रश्न की जाँच कर ली है, जिसे हम तब पूछ सकते हैं, जब हम ईश्वरीय-ज्ञान में बढ़ने का साहस करते हैं, वह है, "ईश्वरीय-ज्ञान क्या है?" इस प्रश्न के तीन पहलुओं को हमने देखा है: ईश्वरीय-ज्ञान की परिभाषा, ईश्वरीय-ज्ञान के उद्देश्य, और ईश्वरीय-ज्ञान के विषय। जैसे-जैसे हम आगे के इन पाठों में बढ़ेंगे, इस पाठ में बताये गये विचार बार-बार प्रगट होते जाएँगे। जैसे-जैसे हम अपनी बुनियादी योजना को दिमाग में रखेंगे, हम उन तरीकों से ईश्वरीय-ज्ञान की पढ़ाई के लिये अच्छे से तैयार हो जायेंगे, जो कि मसीह और उसकी कलीसिया को अर्थपूर्ण सेवा प्रदान करेगी।